पंचम अध्याय

* पंचम अध्याय *

''विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के विविध आयाम''

5.1 प्रास्ताविक -

पूर्ववर्ती चार अध्यायों के विवेचन-विश्लेषण के पश्चात हमें विवेच्य उपन्यासों में प्राप्त संघर्ष-चेतना के विविध आयामों को देखना भी आवश्यक लगता है। वस्तुत: अब्दुल बिस्मिल्लाह संघर्ष के कथाकार हैं। उनकी रचनाओं में संघर्ष का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के कई आयाम दृष्टिगोचर होते हैं। यह संघर्ष-चेतना भिन्न भिन्न धरातल पर देखाई देती है। इसके मूल मे विवेच्य उपन्यासों में निहित परिवेश, वातावरण, संस्कृति, रीति-रिवाज आदि महत्त्वपूर्ण बातें रही हैं। विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के विविध आयामों में से आर्थिक, धार्मिक, सांप्रदायिक, राजनीतिक, सामाजिक और जिंदगी से संबंधित आयाम प्रधान रूप में रहे हैं। हम संसार में भी अनुभव करते हैं कि मनुष्य को विभिन्न पृष्ठभूमियों पर संघर्ष करना पड़ता है। जब अन्याय-अत्याचार तथा शोषण को सहने की शक्ति लुप्त हो जाती है तब कोई भी व्यक्ति शोषण तथा अन्याय-अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करता है।

अब्दुल बिस्मिल्लाह प्रगतिशील विचारों के रचनाकार होने के कारण उनकी रचनाओं का लक्ष्य निम्नमध्यवर्ग तथा शोषित वर्ग को अन्याय के खिलाफ संघर्ष के लिए प्रेरित करना रहा है। 'दंतकथा' उपन्यास को छोड़कर बाकी उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के विभिन्न आयाम प्रस्फुटित हुए हैं। विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के निम्नांकित प्रधान आयाम परिलक्षित होते हैं -

5.1.1 अर्थ से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में मध्यवर्ग तथा निम्न मध्यवर्गीय जनता का चित्रण केंद्रीय

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

विषय रहा है। मध्यवर्गीय तथा निम्नमध्यवर्गीय समाज के संदर्भ में डॉ. अर्जुन चव्हाण लिखते हैं - ''मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती है, विशेषत: निम्न मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सोचनीय होती है।''[1] विवेच्य उपन्यासों में चित्रित पात्रों की स्थिति भी ठीक इसी प्रकार दृष्टिगोचर होती है। अर्थ जीवन की धुरी है। इस पर जीवन की सारी समस्याएँ निर्भर करती हैं। प्रत्येक युग का सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन अर्थ प्रक्रिया से ही संचलित होता है। डॉ. जयश्री बरहाटे ने लिखा है - ''विभिन्न सामाजिक संघर्षों, राजनीतिक समस्याओं एवं क्रान्तियों का मूल कारण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से अर्थ से ही संबंधित रहा है।''[2]

गोपालकृष्ण शर्मा लिखते हैं - ''सामाजिक जीवन में गरीबी, भूखमरी, विषाद, उत्पीड़न, अनमेल विवाह, उपेक्षा, अत्याचार, अमानवीयता, विधवा-विवाह तथा अन्यान्य समस्याएँ और विसंगतियाँ विद्यमान है।''[3] समाज की इन समस्याओं तथा विसंगतियों की जड़ अर्थ है। विवेच्य उपन्यासों में अधिक तर पात्र अर्थाभाव से पीड़ित हैं जो विभिन्न समस्याओं से जूझते हुए परिलक्षित होते हैं। विवेच्य उपन्यासों में अर्थ से संबंधित संघर्ष-चेतना का आयाम प्रधान रूप से दृष्टिगोचर होता है और प्रस्तुत आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

'समर शेष है' अब्दुल बिस्मिल्लाह का आत्मकथात्मक उपन्यास है। इसमें प्रस्तुत आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। उपन्यास का कथा-नायक सात-आठ साल का मातृविहीन बालक है। वह आर्थिक विपन्नताओं से पीड़ित परिलक्षित होता है। माता के देहान्त के पश्चात वह अपनी सौतेली बहन के पास रहा करता है। वहाँ वह बीमार पड़ता है। कथा-नायक अपने शब्दों में कहता है - ''चौबीस घंटे में लगभग बीस-पच्चीस बार मुझे खेत की तरफ दौड़ना पड़ता था। लेकिन ऐंठन के साथ जो थोड़ा-सा लिस-लिसा पदार्थ निकलता, वह मेरी पीड़ा को शांत करने के लिए नाकाफी होता था। हालाँकि कस्बे में इलाज की समुचित व्यवस्था थी। लेकिन पैसे के अभाव में उस व्यवस्था का लाभ मैं नहीं उठा सकता था।''[4] ''... मैंने बहिन से कहा, ''मुझे दस पैसे दे दीजिए, भूसी कै लिए'' उन्होंने मुँह बिचका लिया।''[5] प्रस्तुत उद्धरण से स्पष्ट होता है कि कथा-नायक अर्थाभाव के कारण अपनी बीमारी का इलाज तक नहीं कर पाता।

---

1. डॉ. अर्जुन चव्हाण - राजेंद्र यादव के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन, पृष्ठ - 109
2. डॉ. सौ. जयश्री बरहाटे - हिंदी उपन्यास सातवाँ दशक, पृष्ठ - 154
3. गोपालकृष्ण शर्मा - उपन्यास और समाज, पृष्ठ - 102
4. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 31
5. वही, पृष्ठ - 31

प्रस्तुत उपन्यास में गौण पात्रों के रुप में रहमतुल्ला के परिवार का चित्रण हुआ है। उसकी आर्थिक परिस्थिति भी संघर्षमय है। उसे भी आर्थिक अभावग्रस्त जिंदगी का सामना करना पड़ता है - ''बच्चों की बढ़ती हुई फौज और आर्थिक तंगी ने उन्हें इस कदर चूर कर दिया था कि नैतिकता की सारी सीमाएँ उन्होंने तोड़ दी थी।''[1] रहमतुल्ला की बीवी अर्थाभाव के कारण कथा-नायक से आटा माँगा करती है। कथा-नायक की शिक्षा के लिए भी आर्थिक तंगी ही जिम्मेदार थी। बी.ए.के दाखिले के लिए उसके पास अस्सी रूपए नहीं थे। वह सोचता है - ''... अपने सभी रिश्तेदारों के यहाँ जाऊँगा, अगर वे दस-दस रूपये भी देंगे तो अस्सी रूपये जुट जाएँगे।''[2] लेकिन रिश्तेदारों के घर जाकर दर-दर की ठोकरे खाने के पश्चात भी वह पैसों का इंतजाम नहीं कर पाता। इसका परिणाम कथा-नायक की शिक्षा पर हुआ परिलक्षित होता है।

''झीनी झीनी बीनी चदरिया'' में बनारस तथा बनारस के आसपास के सभी अंसारी बुनकरों की जिंदगी आर्थिक रूप से अभावग्रस्त दृष्टिगोचर होती है। प्रस्तुत उपन्यास में अर्थ से संबंधित संघर्ष-चेतना का चित्रण प्रचुर मात्रा में मिलता है। इस उपन्यास के संदर्भ में डॉ. शशिकला राय कहती है - ''यह उपन्यास काशी के हस्तशिल्पियों के जीवन का यथार्थ और करुण दस्तावेज है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक सभी धरातल पर ये इतने दयनीय है कि इनसे बढ़कर कोई दलित भी नहीं।''[3] उक्त कथन से स्पष्ट है कि आर्थिक अभावों के कारण बुनकरों की स्थिति इतनी दयनीय है कि उनकी तुलना किसी दलित के साथ भी नहीं की जा सकती है।

उपन्यास का नायक तथा कई अंसारी बुनकर अपनी इच्छा होते हुए भी बनती मस्जिद के लिए दान तक नहीं दे पाते। कमरुन अपने पति से कहती है - ''आखिर अल्ला ताला का घर बन रहा है, क्यों न कोई सवाब ले ? पर उसके पास क्या है कि वह बढ़-चढ़कर चंदा लिखवाये और उस जहान में जन्नत और इस जहान में नाम कमाये ?''[4] लतीफ और कमरुन इच्छा होते हुए भी अल्ला ताला के बनते घर के लिए कुछ चंदा दे नहीं सकते। जबकि अन्य उच्चवर्गीय लोग बढ़ा-चढ़ाकर धर्मदाय करते हैं। फिर भी लतीफ कोशिश करके रातभर साड़ी बिनता है और दूसरे दिन गोलघर में जाकर बेचता हैं। लेकिन व्यापारियों की धूर्तता के कारण साड़ी कम दामों में बेचनी पड़ती है। वह आए हुए पैसों में से कुछ पैसे मस्जिद के लिए दे देता है।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 63
2. वही, पृष्ठ - 109
3. सं. गोविंद मिश्र - 'अक्षरा' त्रैमासिक, अक्तूबर-दिसंबर, 2000, पृष्ठ - 87
4. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 14

बशीर के चोट लगने पर उसकी पत्नी को आर्थिक संघर्ष का कुछ अलग ही अनुभव आता है। गिरस्ताओं की दुष्प्रवृत्ति को केंद्र में रखते हुए लेखक कहते हैं - ''गिरस्ता लोग ऐसे दिनों के इन्तजार में ही रहते हैं कि कोई असामी कर्ज लेने आये तो कम-से-कम ! कर्ज वसूलने में जो एक खास किस्म का मजा है वह किसी और काम में कहाँ।''[1] बशीर की बीवी को कर्ज तो मिल जाता है लेकिन बाद में कुछ विपरीत परिणाम निकल आते हैं। लिये हुए कर्ज से वह बशीर के लिए दवा पानी का इंतजाम करती है। कुछ दिनों के बाद कर्ज वसूलने के बदले में गिरस द्वारा बशीर के घर पर कब्जा किया जाता है और उनके मँझले बेटे द्वारा बशीर की बेटी रेहनवा की इज्जत लूटी जाती है।

'जहरबाद' में कथा-नायक और पिताजी की अर्थ से संबंधित संघर्षप्रधान जिंदगी का चित्रण मिलता है। कथा-नायक कहता है जिंदगी को घसीटने के लिए - ''अम्माँ के जेवर रेहन रखकर अब्बा ने चमड़े का व्यापार शुरु किया था। पर मुस्तू मियाँ इस इलाके के बहुत बड़े व्यापारी थे, अत: उनके आगे इनका व्यापार चलना कठिन था। फलत: सारा पैसा लेहना में फँस गया था और भूखों मरने की नौबत आ गयी थी। तब अम्माँ ने टोपरा उठाया था।''[2] आर्थिक तंगी के कारण कथा-नायक की माँ को गाँव-गाँव में जाकर किराने की कुछ चीजें बेचनी पड़ती है और घर का सारा बोझ सँभालना पड़ता है।

जब कथा-नायक सात-आठ साल की उम्र का था तब उसकी अम्माँ गर्भवती थी। कथा-नायक और अब्बा देखते रहते हैं - ''अम्माँ रात-भर दर्द से छटपटाती रहीं और सुबह ... देखा कि वे किसी ऊँची जगह पर नंगी बैठी थीं और सामने खून-पानी के लिसलिसेपन के बीच एक लाल-लाल बच्चा चीख रहा था।''[3] इससे विदित होता है कि अर्थाभाव के कारण कथा-नायक और उसके पिताजी अम्माँ की दयनीय अवस्था को देखे बिना कुछ नहीं कर सकते थे। न वे अम्माँ को अस्पताल ले जातें हैं, न कोई समुचित व्यवस्था कर पाते हैं।

कथा-नायक की उम्र हँसने खेलने की थी। एक दिन कथा-नायक पूरा दिन मनोरंजनपूर्ण तरीके से बिताना चाहता है लेकिन - ''अब्बा एक अधटूटी-सी जंग लगी कैंची लेकर मेरे बाल काटने बैठ गये। पैसों की तंगी के कारण मेरे बाल नहीं बन सके थे,... आँगन में

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 42
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - जहरबाद, पृष्ठ - 9
3. वही, पृष्ठ -43

एक ओर छाया में बोरे पर उन्होंने मुझे बैठा लिया था और अत्यन्त निर्मम तरीके से मेरे लटियाये बालों को कतर रहे थे।''[1] कथा-नायक को एहसास होता है कि सारी लड़ाइयों की जड़ पैसा है। पैसे के अभाव के कारण ही अब्बा को अपने ही बेटे के बाल बनाने पड़ते हैं।

आर्थिक विपन्नता के कारण ही अब्बा और अम्माँ में झगड़े होते हैं। अब्बा अम्माँ की पिटाई करते हैं और उसे घर से निकाल देते हैं। अम्माँ अंतिम फैसला करने के लिए पंचों के रूप में शहबाज खाँ और शमशाद खाँ को बुलाती है। यह सब दृश्य कथा-नायक की आँखों के सामने घटता है। वह कहता है - ''दोपहर होते-होते हमारी परछी में काफी लोग जमा हो गये थे। साथ ही बाहर भी औरतों-मर्दों की अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। और मैं देख रहा था कि किस प्रकार आर्थिक कठिनाइयों से संघर्ष करता हुआ कोई परिवार अन्ततः एक तमाशा बनकर रह जाता है।''[2]

आर्थिक संघर्ष प्रधान रचनाओं में बिस्मिल्लाह जी के 'मुखड़ा क्या देखे' उपन्यास का स्थान भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। इस उपन्यास में एक मुस्लिम चुड़िहार परिवार की दारुण कथा-व्यथा का चित्रण प्रस्फुटित हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास के संदर्भ में भगवानदास मोरवाल कहते हैं - ''यह कथा सिर्फ अली की कथा नहीं है बल्कि यह पूरे भारतीय समाज के बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक की कथा है।''[3]

उपन्यास का नायक अली चुड़िहार तथा नूरु बवाली आदि पात्र आर्थिक संघर्ष से जुड़े हुए परिलक्षित होते हैं। अली चुड़िहार की पत्नी रनिया प्रसव होने के कारण सव्वा महीने तक चूड़ियाँ पहनने के लिए गाँव-गँवई नहीं जा सकती थी। इस कारण से अली गाँव-गँवई करने लगता है। लेखक अली चुड़िहार की परिस्थिति का परिचय कराते हुए कहते हैं - ''अली की गृहस्थी अभी नई थी, इसलिए रूपये-पैसों की तंगी बनी रहती थी। फिर चूड़ियों का रोजगार ऐसा था कि टोकरा भरा रहने पर भी 'मेल' लगाने के लिए चूडियों की जरूरत बनी रहती थी।''[4] लेकिन अली आर्थिक समस्या के कारण अधिक चूड़ियाँ नहीं खरीद सकता था। इसके साथ-साथ परिवार का बोझ भी अली पर ही था।

मुन्ना उपन्यास का चर्चित गौण पात्र है उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है -

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - जहरबाद, पृष्ठ - 94
2. वही, पृष्ठ - 97
3. सं. - 'समाजकल्याण' मासिक, फरवरी, 1997, पृष्ठ - 31
4. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 41

''अपना और बूढ़े माता पिता का पेट पालने के लिए उसे मजूरी करनी पड़ती थी। इसलिए पं. सृष्टिनारायण पाण्डे ने जब कहा कि मुन्ना तुम मेरे साथ रहो, मैं तुम्हारी जिंदगी बना दूँगा।''[1] मुन्ना पाण्डे जी की बात मानता है। पं. सृष्टिनारायण पाण्डे नौटंकी का गठन करते हैं। मुन्ना भी नौटंकी में काम करने लगता है। मुन्ना को मिले इनाम को पंडित जी ही हड़प करते हैं। उसे कुछ भी पैसे नहीं दिए जाते थे। मुन्ना को किसी रखेल की तरह रातभर साथ में लेकर पड़े रहते हैं। आर्थिक विवशता के कारण मुन्ना की जिंदगी बरबाद हो जाती है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात कहा जा सकता है कि अर्थ से संबंधित संघर्ष-चेतना का आयाम विवेच्य उपन्यासों में प्रधान रूप में परिलक्षित होता है। आर्थिक स्थिति जिंदगी को बनाने और बिगाड़ने के लिए महत्त्व रखती है। इसलिए अर्थ मनुष्य को अर्थवान या अर्थहीन बनाने में अहम भूमिका निभाता है।

5.1.2 समाज से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में प्रस्तुत आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। 'विश्वज्ञान संहिता कोश' में कहा है - ''सामाजिक संघर्ष यह एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा दो या अधिक पक्षों के व्यक्ति एक-दूसरे का खलपूर्वक, धमकी या हिंसात्मक विरोध, प्रतिकार या दमन करने का प्रयास करते हैं।''[2]

'समर शेष है' में प्रस्तुत आयाम का व्यापक चित्रण हुआ है। कथा-नायक रहमतुल्ला से प्रश्न करता है - ''गुड्ड की अम्माँ इतनी करती है, तुम कोई काम क्यों नहीं करते?''[3] कथा-नायक के प्रश्न को सुनकर रहमतुल्ला खामोश रहता है। गुड्डू की अम्माँ रहमतुल्ला की आलसी वृत्ति को लक्ष्य करके कहने लगती है - ''ये कुछ नहीं करते भैया, मैं कुछ कहती हूँ तो भद्दी-भद्दी गालियाँ देते हैं और ज्यादा कुछ कहती हूँ तो डंड़ा खाना पड़ता है।''[4] इससे स्पष्ट है कि रहमतुल्ला की कामचोर वृत्ति के कारण दोनों में झगड़ा होता है। लेखक का लक्ष्य समाज में स्थित आलसी प्रवृत्ति को उजागर करना है जिसे त्यागने से पति-पत्नी मे संघर्ष नहीं होगा और वे अपना जीवन सुख में बितायेंगे।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 118
2. सं. मोटूरि सत्यनारायण - विश्वज्ञान संहिता, भाग-1, पृष्ठ - 344
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 30
4. वही, पृष्ठ - 30

'जहरबाद' में भी प्रस्तुत संघर्ष-चेतना का विवरण कम मात्रा में क्यों न हो, अवश्य मिलता है। कथा-नायक बचपन से ही माता-पिता के संघर्ष तथा उनकी लड़ाई के कारणों को देखता रहता है। ईद के शुभ अवसर पर हुए अम्माँ और अब्बा के झगड़े को देखकर कथा-नायक कहता है - ''ईद आयी तो अपने साथ एक कटुता लेकर आयी। पता नहीं किस बात को लेकर ऐन ईदवाले दिन अब्बा और अम्माँ में लड़ाई हो गयी।''[1] कथा-नायक चाहता है कि ईद धूमधाम से मनायी जाएगी लेकिन ठीक ईद के ही दिन अम्माँ और अब्बा में कुछ छोटे-मोटे कारणों को लेकर झगड़ा होता है।

कथा-नायक अपनी बढ़ती उम्र के साथ कुछ बुरी आदतों से परिचित हो जाता है। वह ताश खेलना, तमाखू खाना आदि आदतें सीख जाता है। इसी सिलसिले में उसमें कुछा थोडा-बहुत साहस उत्पन्न होने लगता है। कथा-नायक स्वयं अपने शब्दों में कहता है - ''एक दिन मैंने सम्पतलाल को बुरी तरह पीट दिया और उसकी नाक से खून बह आया। मेरी इस हरकत की शिकायत फौरन अब्बा के पास पहुँची।''[2] कथा-नायक की शिकायत सुनकर अब्बा उखड़ गए और उसे पीटने लगे। पुन: कथा-नायक सम्पतलाल को पीटता है। इस प्रकार संघर्ष दृष्टिगोचर होता है।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में सामाजिक संघर्ष के विभिन्न पहलू दृष्टिगोचर होते हैं। इसमें मुस्लिम समाज के टूटते परिवारों का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। लेखक मुस्लिम समाज में स्थित वास्तविक स्थिति को उजागर करते हुए लिखते हैं - ''औरत जात की आखिर हैसियत ही क्या है ? जब चाहो चूतड़ पर लात मारकर निकाल दो ! औरत का और इस्तेमाल ही क्या है ? कतान फेरे, हाँड़ी-चूली करे, साथ में सोये, बच्चे जने और पाँव दबाये। इनमें से अगर किसी भी काम में हीला-हवाली करे तो कानून-इस्लाम का पालन करो और बोल दो मैं तुम्हें देता हूँ। तलाक ! तलाक ! तलाक !''[3] मुस्लिम समाज की विवाह पद्धति के बारे में डॉ. शशिकला राय कहती है - ''धर्म की आड़ लेकर इस्लाम धर्म में पनपनेवाला यह तलाक का कोढ जिन्दा को मूर्दा में तब्दील कर देता है। निष्प्राण हो रहे समाज को यदि स्पंदित करना है तो इस कुरीति पर मिट्टी डालनी होगी।''[4] प्रस्तुत उपन्यास में अधिकतर निरपराध स्त्रियाँ इसकी

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - जहरबाद, पृष्ठ - 24
2. वही, पृष्ठ - 63
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह -झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 49
4. सं. गोविंद मिश्र - 'अक्षरा' त्रैमासिक, अक्तूबर-दिसंबर, 2000, पृष्ठ - 88

सजा भोगती हैं। कमरुन रेहना इसी के उदाहरण हैं। अमृतलाल नागर के 'बूँद और समुद्र' में शीला स्वींग महीपाल से कहती है - ''पुरूष औरतों के दिल को पत्थर मानता है। फिर उसमें अजंता और एलोरा जैसी खूबसूरती काटता, तराशता है।... और फिर उसे बाघ बघेरों की बस्ती के लिए छोड़कर चल देता है ... औरत पत्थर ही सही, पर उस पत्थर में बनायी हुई अपनी ही खूबसूरती को आदमी क्योंकर भूल जाता है।''[1] मुस्लिम समाज में पुरूष जब चाहे अपनी बीवी को तलाक दे सकता है लेकिन औरतों की स्थिति ठीक इसके विपरीत है। न तो वह दूसरा विवाह कर सकती है और न अकेली रह सकती है। मजबुरन उसे संघर्षमयी स्थिति का सामना करना पड़ता है। प्रभा खेतान स्त्री की जिंदगी पर व्यंगात्मक दृष्टि से कहती है - ''स्त्री की उपयोगिता पुरूषों के लिए है, चाहे वे किसी भी रूप में उसे रखें। पुरुष अपनी मुक्ति तभी पा सकता है जब स्त्री उसके लिए बलि का बकरा बनने को तैयार हो। स्त्री यह भूल जाये कि वह एक चेतन प्राणी है।''[2]

'मुखड़ा क्या देखे' में समाज से संबंधित संघर्ष का चित्रण कम मात्रा में मिलता है। अली चुड़िहार का बेटा बुद्धू उर्फ डा.रफि अहमद सिद्दीकी तोते पासी की लड़की के साथ भाग जाता है। भारतीय संस्कृति में किसी लड़की का किसी पुरुष के साथ बिना ब्याह के भाग जाना उचित नहीं माना जाता। कई दिनों बाद बुद्धू और तोते पासी की लड़की भूरी अपने गाँव बलापुर आते हैं। तोते पासी के पडोस की औरत और भूरी की माँ के साथ झगड़ा करती है। समाज में प्रचलित आपसी संघर्ष का चित्रण लेखक इस प्रकार करते हैं - ''अरे बेटखई, तैं राँड़ होइ जा। तोरे आदमी क लहास निकरे।' चोप्प भतारकाटी कुलच्छिन बिटिया मियाँ के संग भग गई अउर तैं जिंदा है रे ? सरम नहिं आवै।' 'हाँ, हाँ, मोर बिटिया त मियाँ के संग भग गई, मुलाँ ऊ बियाह किहीसे रे, बियाह। अउर तोर बिटिया ? हम जनती नहीं का रे ? परसाल के आपन बिटिया क पेट गिरवाय रहा ? अरे मोरं बप्पा। कुँवारि बिटिया क पेट।''[3] दोनों औरतें एक-दूसरे की चोटी पकडे लड़ रही थीं। लेखक ने यहाँ समाज में स्थित संघर्ष का ज्यों का त्यों चित्र प्रस्तुत किया है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विवेच्य उपन्यासों

---

1. अमृतलाल नागर - बूँद और समुद्र, पृष्ठ - 218
2. सं. कुसुम चतुर्वेदी - 'नया मानदण्ड' त्रैमासिक, अप्रैल-जून 2001, पृष्ठ - 60
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 177-178

में समाज से संबंधित संघर्ष अलग-अलग धरातल पर परिलक्षित होता है। सामाजिक संघर्ष कई कारणों को लेकर होता रहता है।

5.1.3 धर्म से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में धार्मिक संघर्ष का चित्रण अत्यधिक मात्रा में मिलता है। धर्म के संदर्भ में रघुवीर सहाय ने लिखा है - ''हिंदू-मुसलमान संघर्ष की प्रवृत्ति भारत की समाजवादी आकांक्षाओं की सबसे बड़ी शत्रु है।''[1] धर्म के वास्तविक रूप में अब परिवर्तन आया है। डॉ. विजयकुमार अग्रवाल लिखते हैं - ''धर्म के दुरुपयोग के कारण हमें बहुत क्षति उठानी पड़ी है, यद्यपि हम उच्च स्वर में घोषित करते रहे हैं कि नर की सेवा नारायण की सेवा है, लेकिन ऐसे मतों और ऐसी प्रथाओं को वहन करते आ रहे हैं, जो असामाजिक है।''[2] लेखक ने धार्मिक संघर्ष का चित्रण बहुतही संवेदनशीलता से किया है। धर्म के कारण मनुष्य को किस प्रकार विभिन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है इस बात का यथार्थ चित्रण विवेच्य रचनाओं में प्राप्त है।

'जहरबाद' उपन्यास का नायक सात-आठ साल का एक बालक है। जिस दिन कथा-नायक का खतना किया गया उस शाम का वर्णन कथा-नायक अपने शब्दों में कहता है - ''उस रात जब मैं दर्द से कराह रहा था और नानी मेरी जाँघों की सूजी हुई नसों पर घी-सने आटे की लोइयाँ फेर रही थी।''[3] इस्लाम में खतना विधि को महत्तवपूर्ण माना जाता है। जब तक खतना नहीं होता है तब तक उसे मुसलमान नहीं कहा जाता। धर्म के नाम पर एक सात-आठ साल के बालक को इतनी दयनीय अवस्था का सामना करना पड़ता है। धर्म के इस स्वरूप से व्यथित होकर मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है -

''हम आड़ लेकर धर्म्म की अब लीन है विद्रोह में,
मत ही हमारा धर्म्म है, हम पड़ रहे हैं मोह में।
है धर्म्म बस निस्वार्थता ही प्रेम जिसका मूल है,
भूले हुए है हम इसे कैसी हमारी भूल है।''[4]

---

1 सं. विष्णु नागर - रघुवीर सहाय, पृष्ठ - 109
2. डॉ. विजयकुमार अग्रवाल - हिंदी उपन्यासों में सामंती जीवन, पृष्ठ - 68-69
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह - जहरबाद, पृष्ठ - 33
4. मैथिलीशरण गुप्त - भारत-भारती, पृष्ठ - 132

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में धार्मिक संघर्ष के दूसरे रूप का परिचय प्राप्त होता है। दुर्गापूजा के अवसर पर मदनपुरा में हुए संघर्ष का चित्रण लेखक इस प्रकार करते हैं - ''यहाँ मदनपुरा में दो गलियाँ ऐसी है जिनको लेकर बड़ा विवाद है। एक गली ऐसी है जिसमें मुसलमानों की आबादी बहुत ज्यादा है और हिंदू चाहते हैं कि दुर्गा की प्रतिमा इसी गली से होकर गुजरें। मुसलमान नहीं चाहते कि ऐसा हो, वरना उनका ईमान शायद खतरे में पड़ जायेगा। दूसरी गली ऐसी है जहाँ हिंदू आबादी ज्यादा है और उस गली में मुसलमानों ने एक इमाम चौक बना रखा है। वे वहाँ ताजिया बैठाते हैं और हिंदू नहीं चाहते कि ऐसा हो, वरना उनकी आस्था पर शायद चोट पहुँचेगी।''[1] दुर्गापूजा, दशहरा, मुहरम आदि धार्मिक आयोजनों के कारण हिंदू-मुसलमानों में संघर्ष होते हैं। इन धार्मिक उत्सवों के कारण दंगे भड़क उठते हैं और सामान्य जनता इन दंगो का शिकार बन जाती है। धर्म के विदारक रूप को उजागर करते हुए शशिकला राय लिखती है - ''धर्म और रीतिरिवाज इन गरीबों के जीवन में क्षणिक सकून लेकर नही बल्कि कई रातों की नींद हराम करने आते हैं।''[2] अक्सर त्यौहार और उत्सवों का आयोजन दुख को भूल जाने के लिए किया जाता है। लेकिन त्यौहार तथा उत्सव क्षणिक सुख की अपेक्षा दुख छोड़ चले जाते हैं। मुहरम और दशहरे के समय हुए दंगों के कारण सैंकड़ों जाने चली गयी। अधिक समय तक कर्फ्यू जारी रहा, जिससे वहाँ की जनता का जीवन ध्वस्त हो गया। भीष्म साहनी कहते हैं - ''कोई ऐसा धर्माचार नहीं है जो इन्सान को इन्सान के साथ जोड़े-सभी इन्सान को इन्सान से अलग करते हैं, एक दूसरे के दुश्मन बनाते हैं।''[3]

डॉ. ज्ञानचंद गुप्त के मतानुसार ''हमारा अतीत काल धार्मिक दृष्टि से गौरवमय रहा है।''[4] किंतु वर्तमान समय में धर्म के गौरवमयी रूप में परिवर्तन आया हुआ दृष्टिगोचर होता है। दुर्गा भक्तों में आये परिवर्तन को उजागर करते हुए लेखक लिखते है - ''बंगाली टोला में जगह-जगह दुर्गा की प्रतिमाएँ बन रही है। मिट्टी की खूबसूरत स्त्रियाँ। चतुर्भुजा। असुरों का दमन करती हुई। लेकिन इन माटी की देवियों को यह भला कहाँ पता है कि इनके भक्तों में भी अनेक जन अब असुर-सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये हैं।''[5] उक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि इन असुरों रुपी भक्तों के कारण धर्म सड़कछाप बन जाता है।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 161
2. सं. गोविंद मिश्र - 'अक्षरा' त्रैमासिक, अक्तूबर-दिसंबर, 2000, पृष्ठ - 88
3. भीष्म साहनी - कबीरा खड़ा बाजार में, पृष्ठ - 72
4. ज्ञानचंद गुप्त - स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में ग्राम-चेतना, पृष्ठ - 188
5. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 160-161

5.1.4 राजनीति से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना का यह आयाम भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। विवेच्य उपन्यासों में राजनीति से संबंधित संघर्ष का चित्रण कम मात्रा में क्यों न हो लेकिन अवश्य मिलता है। आजकल राजनीतिक भावना केवल शहरों में ही नहीं अपितु गाँवो में भी दिनों-दिन जागृत होती जा रही है। स्वतंत्रता के पूर्व लोगों के अंदर स्वराज की भावना भरी थी। नागार्जुन के बलचनमा उपन्यास का नायक स्वयं बलचनमा कहता हैं - ''सोराज होने पर क्या होगा ? यह बात मैंने पटना में महेन बाबू से पूछी थी। उन्होंने क्या जवाब दिया था भैया क्या बताऊँ ? महेन बाबू ने यही कहा था सोराज होने पर सबके दिन लौटेंगे, सबका भाग्य चमकेगा।''[1]

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में प्रस्तुत संघर्ष-चेतना का चित्रण अधिक मात्रा में हुआ है। काशी के मजदूरों की जिंदगी उखाड़ने के लिए वहाँ की कूट राजनीति जिम्मेदार है। एम.एल.ए.साहब की बात याद आने पर मतीन को इस बात का पता चलता है कि - ''सरकार ने बुनकरों के लिए काफी सहूलियतें दे रखी हैं अब तो। शेयर कैपिटल, आर.बी.आई है, कहीं से भी वह लोन ले सकता है। लोन लेकर अपना निजी धन्दा शुरु कर सकता है।''[2] गिरस तथा कोठिवालों के शोषण से शोषित बुनकर अपना निजी धन्दा बसाना चाहते हैं। मतीन सरकारी योजना का लाभ तो उठाना चाहता है लेकिन हाजी अमीरुल्ला साहब राजनीतिक हथकंड़ों को अपनाकर मतीन को सरकारी योजनाओं के लाभ से वंचित रखते हैं। मतीन बैंक में जाकर लोन की माँग करता हैं लेकिन उसे हाजीसाहब की राजनीतिक धूर्तता के कारण लोन की धनराशी नहीं मिल पाती। तब मतीन हाजीसाहब के खिलाफ संघर्ष के लिए प्रेरित तो होता है लेकिन पहले वह समझौता करना पसंद करता है।

हाजी साहब गाजीपुर के एम.पी. जैनुल बशर की तारीफ करने लगते हैं और अखबार को ध्यानपूर्वक पढ़ने लगत हैं - ''बुनकरों की दयनीय स्थिति की राज्यसभा में चर्चा, 'नयी दिल्ली, 2 दिसम्बर। भारतीय जनता पार्टी के सदस्य श्री बलराज मिश्र ने आज राज्य सभा में विशेष उल्लेख नियम के अंतर्गत वाराणसी, मुबारकपुर तथा आस-पास के लगभग साढ़े पाँच लाख बुनकरों की दयनीय स्थिति पर सरकार का ध्यान आकृष्ट करते हुए अनुरोध किया कि रेशमी

---

1. नागार्जुन - बलचनमा, पृष्ठ - 81
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 17-18

सिल्क धागे के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि होने के कारण इस क्षेत्र के साठ हजार हथकरघों पर प्रभाव पड़ा है।''[1] अखबार पढ़कर हाजी अमीरुल्ला का मन प्रसन्न होता है। उन्हें मालूम है कि रेशमी सिल्क के धागे में और उसके मूल्यों में वृद्धि होने के कारण बुनकर तो रेशम खरीद नहीं सकते जबकि हम गिरस लोग खरीद सकते हैं। इस मूल्यवृद्धि का कारण भी राजनीतिक ही है। श्री बलराज मिश्र राज्यसभा में बुनकरों की दयनीय स्थिति की चर्चा तो करते हैं लेकिन उससे बुनकरों की कोई समस्या का हल नहीं होता। स्पष्ट है यहाँ बुनकरों के खिलाफ कूट राजनीतिक हथकंड़ों को अपनाया गया है।

बुनकरों ने सरकार के खिलाफ उठायी गयी आवाज के संदर्भ में राधेश्याम खाल ने कहा था - ''बुनकरों ने तीन दिनों से कारोबार बंद रखकर अल्ला मियाँ से यह दुआ माँगी कि सरकार को सद्बुद्धि और वह इस संकट से बिजात दिलाये।''[2] इस कथन से बुनकरों की दयनीय स्थिति और सरकार की गलत नीति का परिचय हो जाता है। बनारस तथा पूरे उत्तर प्रदेश के बुनकर सरकार की क्रुर राजनीति से परेशान दिखाई देते हैं। बुनकर राजनीति से छुटकारा पाने के लिए अल्ला मियाँ को दुआखानी करते हैं। अत: बुनकरों में सरकार के खिलाफ संघर्ष की आग भड़कना स्वाभाविक परिलक्षित होता है।

'मुखड़ा क्या देखे' उपन्यास में भी राजनीति से संबंधित संघर्ष-चेतना का चित्रण कम मात्रा में क्यों न हो, लेकिन अवश्य मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास का नायक अली अहमद पंडित रामवृक्ष पाण्डे के द्वारा मार-पीट होने के पश्चात अपना गाँव छोडकर इलाहाबाद में दुखमय जीवन का सामना करता है। देश की आजादी की ओर संकेत करते हुए अली अहमद कहता है - ''गाँधी, नेहरु, सरदार पटेल, मौलाना आझाद और पंडित रामवृक्ष पाण्डे, सत्तार के अब्बा तथा बलापुर से लेकर दुल्लोपुर तक के लोग-सभी की छायाएँ उस बियाबान में तेजी के साथ इधर-उधर भा रही थीं। यह कैसी आजादी मिली है हमें कि अपने राज में भी हम दुख भोग रहें हैं ?''[3] इस उद्धरण से स्पष्ट है कि जितने भी नेता लोग हैं, वे सब आराम से जीवन जीते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। लेकिन अली चुड़िहार का परिवार आजादी मिलने के पश्चात भी दयनीय जिंदगी जीता हुआ परिलक्षित होता है। अली चुड़िहार की दयनीय जिंदगी के पीछे पं. रामवृक्ष

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 116
2. सं. महीपसिंह - 'संचेतना' मासिक, अप्रैल 1988, पृष्ठ - 39
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 59

पाण्डे और मौलवी साहब का कूट राजनीतिक दृष्टिकोण दृष्टिगोचर होता है।

देश में जब दूसरी बार चुनाव होने जा रहे थे तब काँग्रेस ने धुआँधार प्रचार किया था। पं. रामवृक्ष पाण्डे काँग्रेस के नेता थे। पं. रामवृक्ष पाण्डे का मानना था कि काँग्रेस के नेताओ ने देश को आजादी दीलाई है और बलापुर की जनता के एकमात्र कर्णधार हम ही हैं। अत: वे पुन: विजय पाना चाहते थे। अली अहमद के लिए एकमात्र काँग्रेसी नेता पंडित जवाहरलाल नेहरु थे, जो मुल्क के राजा थे। पं. रामवृक्ष पाण्डे के अन्याय-अत्याचार को सहने के बाद राजनीति के खिलाफ आवाज उठाते हुए अली चुड़िहार कहता है - ''जो राजा राजपाट मिलने के बाद अपने गाँव-घर को भूल जाय उसे राजा कहलाने का भला क्या अधिकार है ?''[1] प्रस्तुत कथन से लेखक आज की राजनीति की ओर संकेत करता है। नेता लोग चुनाव के पहले तो जनता के सामने घुटने टेकने के लिए भी नहीं हिचकते। बल्कि चुनाव जीत जाने के बाद वे सब कुछ भूल जाते हैं। इसलिए अली अहमद से कहा गया कथन बिल्कुल सही दृष्टिगोचर होता है।

अशोककुमार पाण्डे ने अपने राजनीतिक जीवन में सलीम से सौ रुपये लेकर कुछ जमीन दी थी। सलीम इस बात का पता बुद्धू उर्फ डॉ. रफी अहमद सिद्दीकी को दे देता है और कहता है - ''असोकवा नेता हो गया है। जो चाहता है, करता है। चमार-पासियों के वास्ते सरकार ने कुछ जमीन दी थी - भूमिहीन वाली योजना में, मगर ऊ सब भी असोकावा ने हथिया लिया।''[2] इस बात को सुनकर बुद्धू आश्चर्यचकित हो जाता है। लेकिन सलीम कहता है - ''पानी में रहै के हैं तो मगरमच्छ से भला बैर लीन जाय सकत है ?''[3] स्पष्ट है सलीम बुदधू तथा अन्य गाँव के लोग अशोक कुमार के खिलाफ संघर्ष करने के लिए चेतित हो उठते हैं लेकिन भविष्य की चिंता के कारण उनमें प्राप्त संघर्ष-चेतना दब जाती है।

5.1.5 जिंदगी से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के इस आयाम का बहुतही महत्त्वपूर्ण स्थान है। मानव सदियों से अपने जीवन में आजीवन संघर्षरत रहा है। जिंदगी में विभिन्न प्रकार के संघर्षो का सामना करना पड़ता है। संघर्षो के अभाव में जिंदगी, जिंदगी नही है। डॉ. उषा यादव

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 59
2. वही, पृष्ठ - 175
3. वही, पृष्ठ - 175

कहती है - ''सुख और दुख की आँख मिचौनी ही जीवन है। टूटे हुए हृदय और बहते हुए आँसुओं के प्रति साहित्यकार का विशेष आकर्षण होता है।''[1] ठीक इस कथन के अनुसार लेखक की दृष्टि रही है।

'समर शेष है' का नायक एक सात-आठ साल का एक मातृविहीन बालक है। कथा-नायक और उसके पिता अब्बा दोनों भी दयनीय जिंदगी के विभिन्न अनुभव महसूस करते हैं। कथा-नायक उपनी संघर्षमयी जिंदगी में नौटंकी, होटल, जालियाँ बनाने के कारखाने में आदि स्थानों पर काम करता है। कथा-नायक के अपने शब्दों में - ''दुकान के सामने पटरी पर बैठकर मैं पतीलों की मँजाई में जुट गया। वहाँ चार बड़े-बड़े और पाँच-छः छोटे पतीले पड़े हुए थे, जिन्हें मुझे माँजना था। यह मेरी अग्नि-परीक्षा थी। लेकिन परीक्षा की पद्धति ने मुझे रूला दिया। मेरी आँखों से टप्-टप् आँसू पतीले पर गिर रहे थे और राख में समाते जा रहे थे ...।''[2] कथा-नायक विभिन्न प्रकार के अनुभव पाने के पश्चात कहता है - ''जिंदगी सिर्फ वही नहीं है, जो छाया के साथ जुड़ी हुई है। जिंदगी वह भी है जो आँधियों से लड़ रही है।''[3] इन अवतरणों से कथा-नायक की संघर्षशील जिंदगी का परिचय हो जाता है।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में उपन्यास का केंद्रीय पात्र तथा बनारस और उसके आस-पास के सभी बुनकरों की जिंदगी में संघर्ष दृष्टिगोचर होता है। बुनकरों की संघर्षप्रधान जिंदगी को ध्यान में रखकर ही भारत भारतद्वाज कहते हैं - ''लाखों अंसारी बुनकरों की छोटी जिंदगी की बड़ी कहानी है यह उपन्यास।''[4] भोला पहली बार बनारस में आता है। भोला की दोस्ती मतीन से हो जाती है। मतीन हाजी साहब के यहाँ बानी पर बिनता था। मतीन करघे पर साडी बीन रहा था। वह साड़ी पर स्थित दो फूलों के बीच की खाली जगह को बुनता रहता है। भोला एक किनारे बैठकर चुपचाप मतीन का बुनना देखता है - ''मतीन बिनता रहता है - जैसे वह लाग नहीं, जिंदगी का अंतराल बुन रहा है।''[5] भोला मतीन से कहता है पाँव तुम्हारे गड्ढे में है और इतना अच्छा फूल कैसे बन रहा है। मतीन को यह आदत बनी थी। इसलिए मतीन एक साथ दो काम करता हुआ परिलक्षित होता है। वह साडी तो बिनता ही है लेकिन साथ-साथ अपने जिंदगी के अंतराल को भी बुनता है। मतीन की जिंदगी का अंतराल है, सोसायटी के मेंबर

---

1. डॉ. उषा यादव - हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना, पृष्ठ - 37
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 52
3. वही, पृष्ठ - 100
4. सं. गोपाल राय - 'समीक्षा' त्रैमासिक, अक्तूबर-दिसंबर, 1987, पृष्ठ - 11
5. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 47

बनाने की चिंता, बीवी की बीमारी और बुनकरों की जिंदगी आदि-आदि। बशीर की पत्नी का देहान्त होने के बाद भी बशीर उस लाश की आवश्यकताओं को पूरी नहीं कर पाता। बशीर की इस अवस्था को देखकर मतीन सोचता है कि जिंदगी में आदमी अपनी बहुत सारी आवश्यकताएँ जीवनभर पूरी नहीं कर पाता । जबकि वे आवश्यकताएँ मर जाने के उपरांत किस कदर सिमट जाती है ।

'जहरबाद' में कथा-नायक तथा उसकी अम्माँ की दर्दनाक जिंदगी का चित्रण हुआ है। अब्बा चरित्र हीनता का आरोप लगाकर अम्माँ को घर से निकाल देते हैं। उस समय कथा-नायक कहता है - ''जिसे मैंने एक छोटासा फोड़ा-भर समझ रखा है वह भीतर ही भीतर काफी दूर तक फैल गया है। ऊपर से भले ही वह शुष्क दिखाई दे रहा हो पर उसकी तह में मर्मांतक टीसें भरी हुई हैं, उसकी पर्तों में जहरीले कीड़े बिलबिला रहे हैं। वह फोड़ा-वह जहर ही हमारा जीवन है, जिसे हम किसी मजबूरी की भाँति जी रहे हैं।''[1] अब्बा ने अम्माँ पर किया चरित्रहीनता का आरोप अनुचित था । अम्माँ फुलझर के घर जाती थी लेकिन लोखरी से अम्माँ के कोई संबन्ध नहीं थे। इस बात का पता कथा-नायक को पहले से ही था लेकिन उसने इस बात को उजागर नहीं किया। किंतु इससे अम्माँ के साथ-साथ पूरे परिवार को संघर्षमयी जिंदगी का सामना करना पड़ा।

'दंतकथा' में भी प्रस्तुत संघर्ष का चित्रण मिलता है लेकिन अन्य संघर्ष-चेतना के आयामों से यह बिल्कुल अलग है। इसमें चित्रित संघर्ष अन्य संघर्षों से भिन्न है। इसका नायक एक मुर्गा है। उसे भी अपनी जिंदगी में संघर्ष करना पड़ता है। उपन्यास के आरंभ से ही मुर्गे की संघर्षशील जिंदगी का चित्रण मिलता है। यह उपन्यास कोई दंतकथा नहीं है यह एक मुर्गे की आत्मकथा है। उपन्यास का नायक मुर्गा खदेड़नेवाले के डर से एक नाबदान में घुस गया था। मुर्गा स्वयं कहता है - ''मैं क्यों आ गया यहाँ ?'' मैंने पल-भर के लिए यह सोचा, लेकिन तुरन्त ही मुझे उस जवान आदमी का चेहरा याद आ गया जो मुझे खदेड़ रहा था और गली में खड़े अपने मित्र को इशारा कर रहा था।''[2] इस कथन से स्पष्ट है कि मुर्गे को भी अपनी जिंदगी में नाबदान में घुसने के बाद तथा बाहर भी संघर्ष करना पड़ा हैं।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - जहरबाद, पृष्ठ - 96
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - दंतकथा, पृष्ठ - 13

'मुखड़ा क्या देखे' में अली चुड़िहार के जीवन संघर्ष की गाथा का चित्रण मिलताहै । उपन्यासकार अली की जिंदगी के संघर्ष का चित्रण करते हैं - ''अंधेरी रात थी और रास्ता सुझाई नहीं पड़ता था। पाँव कभी कीचड़ पर पड़ते तो कभी ईंट-पत्थर से टकराते। अली अहमद सँभल-सँभलकर चलता हुआ घर पहुँचा और रनिया को बगैर कुछ बताए, चुपचाप खाना खाकर लेट गया।''[1] पं. रामवृक्ष पाण्डे द्वारा पीटने के पश्चात अली अपना हितैषी समझकर मौलवी साहब के पास कहानी सुनाने अंधेरे में टकराते हुए उनके घर जाता है लेकिन मौलवी साहब अली की बात को नहीं मानते। जिंदगी भर अली का हिंदू प्रजा और मुस्लिम प्रजा से शोषण होता है। वह न्याय के लिए पंडित जवाहरलाल नेहरु तक जाने का प्रयास करता है लेकिन संघर्ष की जिंदगी में वह हर दम असफल रहा परिलक्षित होता हैं।

निष्कर्षत: स्पष्ट है विवेच्य उपन्यासों में जिंदगी से संबंधित संघर्ष-चेतना का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। लेकिन सभी उपन्यासों में जिंदगी के संघर्ष का धरातल अलग-अलग परिलक्षित होता है।

5.1.6 मजदूर-मालिकों में संघर्ष-चेतना :-

अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास मे संघर्ष-चेतना के इस आयाम का चित्रण अत्यधिक मात्रा में मिलता है। पूरे भारतवर्ष में मजदूर मालिक संघर्ष सदियों से चला आ रहा है। इसमें मिल-मालिक, कारखानदारों एवं जमीनदारों से होनेवाले शोषण क खिलाफ मजदूरों को संघर्ष करना पडता है। कभी-कभी मालिक लोग भी जान बुझकर मजदूरों की माँगे पूरी नहीं करते। मालिकों की अपेक्षा मजदूरों को आजीवन संघर्ष से जूझना पड़ा है। मजदूर-मालिकों में प्राप्त संघर्ष-चेतना का मूल 'अर्थ' ही रहा है।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में उपन्यासकार ने बनारस के निम्न-मध्यवर्गीय मजदूर बुनकरों के संघर्ष का चित्रण बड़ी संवेदनशीलता से किया है। मजदूर बुनकरों की पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधि पात्र मतीन है और नयी पीढ़ी का प्रतिनिधी पात्र मतीन का बेटा इकबाल है। मजदूरों के शोषक हाजी गिरस है। मतीन के पास अपना करघा न होने के कारण वह हाजी साहब

1.अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 33

की कोठी में बानी पर बिनता था। मतीन मजबूरी से काम करता है। वह कहता हैं - ''पेट को ही नहीं अँटता, क्या करें ? कितनी भी सफाई से बिनो, नब्बे रूपया से ज्यादा मजदूरी नहीं मिलने की। हप्ते भर में सिर्फ नब्बे रुपया। उसमें से भी कभी पाँच रूपया 'दाग' का तो कभी तीन रूपया 'मत्ती' का और कभी 'रफू' का तो कभी 'तीरी' का कट जाता हैं।''[1] यह हालत सिर्फ मतीन की ही नहीं बल्कि बनारस, मऊ तथा आसपास के सभी मजदूर बुनकरों की है। गिरस कोठिवालों से होनेवाली इन नायजाज कटौंतियों के खिलाफ मतीन सभी मजदूर बुनकरों को इकट्ठा करके सोसायटी बनाने का हरदम प्रयास करता है। जिसके कारण सभी मजदूर बुनकरों को सोसायटी से कर्ज मिलेगा और वे अपना करघा, रेशम खरीदेंगे और अपना अलग व्यवसाय करेंगे।

मतीन ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं है लेकिन समझदार है। वह शोषण का शिकार है। किंतु वह इस स्थिति से समझौता नहीं करता बल्कि मुक्ति के लिए उपाय ढूँढ़ता है। मतीन मजदूर बुनकरों को गिरसों के शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए काफी प्रयत्नशील है। बुनकरों के श्रम का परिचय करते हुए शशिकला राय कहती है - ''बुनकर समाज बारीक से बारीक बुन सकता है पर बुने हुए जाल को काट नहीं पाता उसी में फंसा तडपता अपनी मुक्ति के लिए बहेलियों से रहम चाहता हैं। इसके साथ ही यह भी सत्य है कि जाल के भीतर ही उन्होंने अनेक ऐसे परिन्दो को जन्म दे दिया जो जाल सहित उपर अनंत आकाश में उड़ जाने को प्रयत्नशील है।''[2] गिरसों तथा कोठिवालों के शोषण से परेशान मतीन संघर्ष करके थक जाता है और बुनकरों के शोषण से मुक्तिसंघर्ष की बागडोर बेटे इकबाल के हाथों में सौंप देता है।

इकबाल पढ़ा-लिखा है। वह मजदूर बुनकरों को संगठित करता है और बुनकरों को अपने हक, अधिकार, शोषण, श्रम आदि क बारे में जानकारी देता है। लेखक इकबाल में जगी संघर्ष की आग को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं - ''इकबाल के अल्फाज अंगारों की तरह जल रहे हैं - यह कटौती, यह साजिश, यह बद-इन्तजामी खत्म होनी चाहिए। सरमायादारों की तिकड़में अब टूटनी चाहिए और आम बुनकरों को उनका हक मिलना ही चाहिए। हमारे बापों ने भले सब कुछ बर्दाश्त किया, पर हम नहीं करेंगे। हम एहते जाज करेंगे।''[3] इकबाल कोठीवालों द्वारा होनेवाले अन्याय के खिलाफ आवाज उठाकर मजदूर बुनकरों को गिरसों के जाल से बाहर

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 11
2. सं. गोविंद मिश्र - 'अक्षरा' त्रैमासिक, अक्तूबर-दिसंबर, 2000, पृष्ठ - 89
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 192

निकालता है और कहता है - ''जो सरमायादार है, उनका सरमाया दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है और एक हम हैं जो दिन-ब-दिन तनज्जुली की ओर लुढ़कते जा रहे हैं।''[1]

स्पष्ट है कि मतीन बुनकर मजदूरों की शोषण से मुक्ति करने में असफल हुआ है लेकिन वह हरदम प्रयासरत रहा है। जबकि इकबाल ने पुन: मजदूरों को संगठित करके गिरस कोठिवालों के खिलाफ संघर्ष किया और मजदूरों को अपने अधिकारों से परिचित कराया है।

5.1.7 शिक्षा से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में प्राप्त संघर्ष-चेतना के महत्त्वपूर्ण आयामों में से शिक्षा से संबंधित संघर्ष-चेतना का आयाम भी महत्त्वपूर्ण है। विवेच्य उपन्यासों में प्रस्तुत आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। 'समर शेष है' उपन्यास में शिक्षा से संबंधित संघर्ष-चेतना का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। कथा-नायक अपने कर्मशील जीवन में टेस्टवर्क में काम करता था। कथा-नायक स्वयं कहता है - ''प्रिंसिपल साहब ने मुझे आदेश दिया कि टेस्टवर्क का काम मैं फौरन छोड़ दूँ और अपनी पढ़ाई-लिखाई में लग जाऊँ। हालाँकि पढ़ना काम करने से ज्यादा जरुरी था, क्योंकि उसी के लिए तो सारा टंटा था, पर काम करना भी इसलिए जरुरी था कि पढ़ाई को जारी रखा जा सके।''[2] कथा-नायक अपनी स्थिति से प्रिंसिपल साहब को अवगत कराता है तो प्रिंसिपल साहब कहते हैं - ''तुम अपनी पढ़ाई देखो, बाकी चीजें मेरे ऊपर छोड़ दो।''[3] स्पष्ट है कथा-नायक अपने शैक्षिक जीवन में संघर्ष करता हुआ परिलक्षित होता है।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में प्रस्तुत आयाम का चित्रण अधिक मात्रा में मिलता है। मतीन अपनी दयनीय अवस्था के रहते हुए भी वह बेटे इकबाल को पढ़ाना चाहता है। मतीन की इच्छा को व्यक्त करते हुए लेखक कहते हैं - ''मतीन की इच्छा है कि इकबाल को वह अंग्रेजी स्कूल में पढ़ायेगा। लतीफ तो अपने लड़के को मदरसे में भेजनेवाला है।''[4] इस कथन से स्पष्ट है कि आर्थिक स्थिति दयनीय होते हुए भी बुनकर समाज अपने बेटों को पढ़ाना चाहता है। मतीन चाहता है कि इकबाल भी मतीन के समान बिनकारी न करे। इसलिए वह इकबाल का नाम अंसारी स्कूल में दर्ज करता है। तात्पर्य यह है कि कितनी भी दयनीय जिंदगी के होते हुए भी

1.अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 195
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 74
3. वही, पृष्ठ - 74
4. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 30

शिक्षा का अपना अलग महत्त्व है जो प्रगति के पथ पर लाकर छोड़ देता है। 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास का अंत भी ज्ञान की आँधी के साथ होता है।

'मुखड़ा क्या देखे' में इस प्रकार की संघर्ष-चेतना का चित्रण अत्यल्प मात्रा में मिलता हुआ दृष्टिगोचर होता है। अली अहमद ने बुद्धू का नाम दर्जा छः में बलापुर में ही लिखवाया था। उस स्कूल में अधिकतर छात्र हिंदू थे और बुद्धू अकेला मुस्लिम था। बुद्धू को सारे छात्र छेड़ते हैं तब बुद्धू स्कूल में नहीं जाता चाहता। अली बुद्धू से पूछता है - ''क्यों नहीं जाएगा ? अरे मास्टर साहब ने मार दिया तो क्या हो गया ? हमारे जमाने में तो ऐसी मार पड़ती थी कि अरहर का सोंटा टूट जाता था। पीठ पर नील पड़ जाती थी। वो तो हमारी कमअकली और बदकिस्मती थी कि मार के डर से भाग गए और पढ़-वढ़ नहीं सके। कम से कम तुम तो पढ़ लो।''[1] स्पष्ट है अली अहमद बुद्धू को साफ-साफ बता रहा था लेकिन बुद्धू सांप्रदायिक वाद के कारण स्कूल नहीं जाता।

5.1.8 संप्रदाय से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में इस आयाम का चित्रण अधिक मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। देश विभाजन की विभीषिका से प्रस्तुत आयाम में परिवर्तन आया हुआ परिलक्षित होता है। 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में विवेच्य आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। बनारस में रामलीला के अवसर पर हुए सांप्रदायिक संघर्ष का चित्रण करते हुए लेखक कहते हैं - ''... इस साल न तो नाटी इमली का भरत-मिलाप होगा और न चेतगंज की नककटइया निकलेगी। इस खबर से मुसलमानों का एक वर्ग बेहद खुश होता है, लेकिन हिंदुओं का एक वर्ग बुरी तरह भड़क उठता है। पचास वर्षों से जो रिवाज चले आ रहे हैं उन्हें बंद करने की जुर्रत आखिर कैस हुई? जरुर इसमें किसी मुसलमान नेता का हाथ हैं।''[2] इस कथन से स्पष्ट होता है कि राजनीति संप्रदाय में विष घोलने का काम करती है जिसके कारण सांप्रदायिक दंगे भड़क उठते हैं। सांप्रदायिक संघर्ष के मूल में हिंदू तथा मुसलमानों के त्यौहार,उत्सव बाधा बनकर आये हुए परिलक्षित होते हैं। रामलीला में जिन विभिन्न प्रसंगो को महत्त्वपूर्ण माना जाता है उन प्रसंगों को बंद करने के

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 123
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 165-166

लिए सरकार से आदेश निकलते हैं। लेकिन हिंदू अपने रिवाज में परिवर्तन नहीं करना चाहते। उनका मानना था कि हमारे रीतिरिवाजों को बंद करने के पीछे किसी मुस्लिम नेता का हाथ हो सकता है। इस विवाद को लेकर हिंदू-मुसलमानों में आपसी वैरभाव निर्माण होकर संघर्ष छिड़ जाता है। इस सांप्रदायिक वाद के कारण कई निरपराध लोग मारे जाते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट होती है कि रामलीला, दशहरा, होली, दुर्गापूजा तथा ताजिए, मुहर्रम आदि उत्सवों के समय सांप्रदायिक संघर्ष अधिक होते हैं और उसका परिणाम सामान्य जनता के जनजीवन पर होता है। इससे वे अपनी रोजी-रोटी की समस्याओं का समाधान भी नहीं कर पाते। बाद में यह हिंदू-मुस्लिमों के नेता चुनाव नजदीक आने पर हिंदू-मुस्लिम एकता के नारे लगाते हैं।

अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'मुखड़ा क्या देखे' में भी सांप्रदायिक वाद का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। पंडित रामवृक्ष पाण्डे की सांप्रदायिकतावादी वृत्ति के कारण ही अली चुड़िहार को अपना घर दार छोड़के रोजी रोटी के लिए इलाहाबाद जाना पड़ता है। लेखक अली अहमद की बचपन की यादों को उजागर करते हुए लिखते हैं - ''बचपन और जवानी के दिनों में अली भी खूब जाता था लीला देखने। कैसी चहल - पहल रहती थी लल्लन लाला के दरवाजे पर। धनुष्य यज्ञ के दिन वे खुद बनते थे राजा जनक ... 'अली अहमद अपनी कोठरी में आँखे बंद किए लेटा था और सोच रहा था।''[1] इस कथन से स्पष्ट होता है कि इच्छा होते हुए भी अली अहमद रामलीला के प्रसंग को देखने के लिए नहीं जा सकता। क्योंकि पहले ही पं. रामवृक्ष पाण्डे ने अली अहमद की पीटाई की थी। इसलिए अली उनके डर के कारण अपनी कोठरी में सोचता हुआ पड़ा रहता हैं।

भारत-पाकिस्तान के विभाजन के पश्चात भी सांप्रदायिक दंगों के कारण कई मुसलमान यहीं भारत में रहे थे। सांप्रदायिक दंगों की इस विभीषिका का विवेचन भाभी के कथन से स्पष्ट हो जाता है - ''हम काहे जाएँ। हमारा पूरा खानदान चला गया पाकिस्तान, मुलाँ हम नहीं गए। ये तो सहर है। का पाकिस्तान से बड़ी जग है ई इलाहाबाद। बारा बरस की उमर में हम

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 169

हियाँ बहू बनके आए रहीं, तब से ई बलापुर ने हमें अपनी बिटिया की तरह माना।''[1] भाभी के इस कथन से हम अनुमान लगा सकते है कि भारत-पाकिस्तान के युद्ध के बाद सांप्रदायिकता को बढ़ावा मिलता रहा। इसके डर से भाभी जैसी स्त्रिया पुन: पाकिस्तान जाने के लिए तैयार नहीं है।

स्पष्ट है विवेच्य उपन्यासों में प्रस्तुत आयाम महत्त्वपूर्ण और अहंम भूमिका निभाता है जिससे सांप्रदायिक वाद को मिटाना आसान हो जाएगा।

5.1.9 अन्तर्जातीय संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में संघर्ष-चेतना के इस आयाम का चित्रण कम मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। अब्दुल्ल बिस्मिल्लाह के 'मुखड़ा क्या देखे' उपन्यास में प्रस्तुत आयाम का निरुपण हुआ है। उपन्यास में अली अहमद अपनी शिकायत करने के लिए नेहरु जी से मिलना चाहता है। वह सोचता हुआ मखदूम नाऊ के पास चला जाता है। मखदूम नाऊ पंडित रामवृक्ष पाण्डे की शिकायत करने के लिए अली अहमद से कह देता है। लेकिन अली अनेक विचारों में डूब जाता है । वह सोचता है कि नेहरू जी अली की शिकायत सुनेंगे या नहीं ? अली चुड़िहार के प्रश्न को समझाते हुए मखदूम नाऊ कहता है - ''मुसलमानों को वे बहुत चाहते हैं। काहे, जानते हो ? अली अहमद ने सिर हिलाकर इनकार किया। अरे उनकी बिटिया मुसलमानै के हियाँ न ब्याही हैं। फीरोज नाम है दामाद का।''[2] लेखक इस कथन से अन्तर्जातीयता की संकल्पना स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं। पं. जवाहरलाल नेहरु की बेटी की शादी मुस्लिम युवक फीरोज के साथ हुई थी। आज की वर्तमान स्थिति को केंद्र में रखते हुए लेखक अन्तर्जातीय आदर्श को स्थापित करना चाहते हैं।

जहाँ तक बात सत्य है अन्तर्जातीयता एक आदर्श तो है ही लेकिन कभी-कभार इसका रूपान्तर अन्तर्जातीय संघर्ष में हुआ परिलक्षित होता है। पं. अशोककुमार पाण्डे ताहिरा को बहुत चाहते थे। वे ताहिरा से कहते हैं - ''डार्लिंग ताहिरा, मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ। मुहब्बत अंधी होती है। समझ लो मैं भी अंधा हो गया हूँ। यद्यपि तुम्हारा और मेरा धर्म अलग-

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 200
2. वही, पृष्ठ - 35

अलग है मगर प्रेम के मार्ग में धर्म का कोई बंधन नहीं होता। यदि तुम मुझे स्वीकार कर लो तो मैं अपना धर्म छोड़ दूँगा।''[1] इस कथन से स्पष्ट होता है कि अशोककुमार पाण्डे पुरानी प्रथा को तोडकर अन्तर्जातीय विवाह करना चाहता हैं लेकिन ताहिरा गरीब और मुस्लिम परिवार की होने के कारण डरती है। क्योंकि इनके प्रेमविवाह से कहीं अन्तर्जातीय संघर्ष न छिड़ जाये। लेकिन यहाँ लेखक का दृष्टिकोण अंतर्जातीय विवाह के पक्ष में दिखाई देता है। स्पष्ट है कि अन्तर्जातीय संघर्ष-चेतना आदर्श भी बन जाती है और संघर्ष का रूप भी धारण करती हैं।

5.1.10 अधिकार से संबंधित संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में अधिकार से संबंधित संघर्ष-चेतना का चित्रण भी पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। 'समर शेष है' में प्रस्तुत आयाम का चित्रण प्राप्त होता है। कथा-नायक अपने दयनीय जीवन में नौकरी ढूँढ़ने के सिलसिले में एक सरकारी ऑफिस में पहुँचता है। वहाँ के बड़े बाबू कथा-नायक से पूछताछ करते हैं और कहते हैं - ''जो काम अठारह वर्ष का व्यक्ति कर सकता है, उसे सोलह या सत्रह वर्ष का व्यक्ति शायद नहीं कर सकता - यह नियम अगर सरकार द्वारा निर्मित है तो ठीक ही होगा, मैंने उस वक्त, सिर्फ इतना ही सोचा और पिघलते हुए कोलतार पर चल पड़ा ...।''[2] कथा-नायक की उम्र उस समय सोलह वर्ष की थी। कथा-नायक अधिकार से नौकरी माँगने जाता है लेकिन इस नियम के कारण उसे उस सरकारी दप्तर में नौकरी नही मिल पाती। लेकिन वह गुस्से में आकर सोचता जरुर हैं कि यदि यह नियम सरकार द्वारा बनाया गया हो तो ठीक होगा। स्पष्ट है कथा-नायक में संघर्ष उत्पन्न होता है लेकिन परिस्थिति के आगे वह कुछ नहीं कर सकता।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में भी इस आयाम के कई उदाहरण दृष्टिगोचर होते है। प्रस्तुत उपन्यास में मजदूर बुनकरों में, विद्यार्थियों में प्रस्तुत आयाम का चित्रण मिलता है। मतीन का बेटा इकबाल बुनकर मजदूरों के अधिकार को दिलाने के लिए प्रयत्नशील है। लेखक बुनकरों के अधिकार तथा उनकी सुविधाओं का विवेचन करते हुए लिखता है - ''बुनकरों की सुविधा के लिए सरकार ने बनासर शहर में लगभग दो सौ सहकारी समितियाँ गठित की है,

---

1.अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 204

2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - समर शेष है, पृष्ठ - 59

जिनके माध्यम से यहाँ के आम बुनकरों का माल बाहर के बाजर में अच्छे दामों पर बिक सके, लेकिन ऐसा हो नहीं पा रहा है।''[1] बुनकर हक से अपनी साड़ियाँ इन समितियों में ले जाते हैं लेकिन उनकी साड़ियाँ वही पड़ी रहती हैं और हाजी अमीरुल्ला, सेठ गजाधर प्रसाद आदि लोगों की साड़ियाँ तो सिंगापुर और बैंकाक के लिए 'एक्सपोर्ट' होती है। इसलिए बुनकर अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष करते हैं। निष्कर्षत: स्पष्ट है प्रस्तुत आयाम मनुष्य को स्वाभिमान के साथ जीने की प्रेरणा देता है।

5.1.11 शोषण के खिलाफ संघर्ष-चेतना :-

विवेच्य उपन्यासों में प्रस्तुत आयाम का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है। समाज में यह प्रवृत्ति चली आ रही है कि उच्चवर्ग के लोग निम्नवर्ग तथा निम्नमध्यवर्गीयों का तथा सर्वहाराओं का शोषण करते हैं। यह शोषण विभिन्न धरातलों पर होता है। 'सफर' के महीने का आखिरी बुध था। यह पर्व बनारस के बुनकरों का बहुत ही महत्त्वपूर्ण पर्व है। मतीन और इकबाल दोनों बाप बेटे शोषण के खिलाफ अनशन पर बैठे थे। लेखक शोषण के खिलाफ हुए संघर्ष का चित्रण करते हुए लिखता है - इकबाल ने तो साफ कह दिया था कि जब तक को-ऑपरेटिव सोसाइटियों में आम बुनकरों की भागीदारी शामिल नहीं की जायगी तब तक यह कार्यक्रम जारी होगा।''[2] इकबाल और मतीन ने गिरस और कोठिवालों के खिलाफ यह आंदोलन चलाया था। अठारह दिनों तक अनशन पर बैठने से भी गिरस-कोठिवालों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। एक दिन सेठ गजाधर प्रसाद और हाजी अमीरूल्ला और शरफुद्दीन नेता समझाने के लिए आते हैं लेकिन इससे कोई परिणाम नहीं निकलता।

स्पष्ट है कि लेखक प्रस्तुत आयाम के माध्यम से सर्वहारा वर्ग तथा निम्नमध्यवर्गीयों में शोषण के खिलाफ संघर्ष करने के लिए एक प्रकार का साहस और धैर्य उत्पन्न करता है। लेखक का उद्देश्य यही है कि जिस प्रकार बुनकरों का शोषण हुआ वैसा और किसी का न हो और पहले से ही वे शोषण के प्रति सजग रहे।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 192-193
2. वही, पृष्ठ - 206

5.1.12 व्यक्तिगत संघर्ष-चेतना :-

संघर्ष-चेतना के विविध आयामों में व्यक्तिगत संघर्ष-चेतना का आयाम भी अपना अलग महत्त्व रखता है। व्यक्तिगत संघर्ष तब होता है जब एक ही उद्देश्य की प्राप्ति के लिए दो या दो से अधिक व्यक्ति एक-दूसरे को धमकाते हैं या बलपूर्वक दबाने का प्रयास करते हैं। विवेच्य उपन्यासों में व्यक्तिगत-संघर्ष का पर्याप्त चित्रण हुआ है। 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में भी प्रस्तुत आयाम का चित्रण दृष्टिगोचर होता है। लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में क्षेपक में अपने आए अनुभव को उजागर किया है। जब बिस्मिल्लाह जी हाजी साहब के पास उपन्यास के लेखन के संदर्भ में चर्चा करने गये थे तब हाजी साहब के पूछने पर बिस्मिल्लाह जी ने बुनकरों की वास्तविक स्थिति का परिचय दिया तब - ''हाजी साहब भड़क उठें। उन्होंने इस बात का तीव्र विरोध किया कि गिरस्ता लोग मजदूरों का शोषण करते हैं ... तूँ मट्टर साब इन भोसड़ियावालेन के बारे में एत्तर की बात कइसे लिखेतो ?''[1] इस कथन से विदित होता है कि लेखक ने 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास के लेखन के संबंध में हाजी साहब से इजाजत माँगी तो हाजी साहब ने बुनकरों के शोषण की बात को लिखने के लिए मना किया। फिरी भी अब्दुल बिस्मिल्लाह जी ने साहस और निडरता के साथ उपन्यास लिखा है।

'मुखड़ा क्या देखे' में प्रस्तुत आयाम का चित्रण अत्यल्प मात्रा में हुआ है। अली चुड़िहार और जलील बिट्टन खाला के घर खलील की शादी के बारे में बिन बुलाए मेहमान बनकर जाते हैं। बिट्टन अपनी लड़की का ब्याह खलील के साथ नहीं करना चाहती। लेकिन अली चुड़िहार बिट्टन से कहता है - '' अरे बिट्टन सुनो तो ... ' अली अहमदने बीच में टोकना चाहा तो बिट्टन खाला और भड़क उठी:' तुम क्या सुनाओगे आँ ? तुम तो खुद उठल्लू का चूल्हा हो। ऐसे ही इज्जतदार होते तो अपने गाँव-देस में न होते ! यहाँ क्यो दर-दर भटकते ?''[2] इससे स्पष्ट होता है कि अली चुड़िहार को बिना कुछ कारण बिट्टन खाला के साथ संघर्ष करना पड़ता है और बिट्टन खाला जलील और अली चुड़िहार पर अपना रोब जमाती हुई परिलक्षित होती है। स्पष्ट है कि व्यक्तिगत संघर्ष-चेतना का आयाम भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितने अन्य आयाम महत्त्वपूर्ण हैं।

---

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह - झीनी झीनी बीनी चदरिया, पृष्ठ - 140
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह - मुखड़ा क्या देखे, पृष्ठ - 85

निष्कर्ष :-

विवेच्य उपन्यासों में प्राप्त संघर्ष-चेतना के विविध आयामों के विवेचन-विश्लेषण के पश्चात मैं इस निष्कर्ष तक पहुँचता हूँ कि -

1. विवेच्य उपन्यासों में अर्थ से संबंधित संघर्ष-चेतना का आयाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। हम जो संघर्ष करते हैं वे प्राय: अर्थ प्राप्ति के लिए ही होते हैं। अर्थ के कारण मजदूर-मालिकों में संघर्ष का चित्रण मिलता है। मजदूर अर्थ के कारण ही मालिकों के खिलाफ आंदोलन छेड़ते है।

2. समाज से संबंधित संघर्ष-चेतना का आयाम इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि समाज के बिना सब निरर्थक है। सामाजिक संघर्षों में तलाक, अकाल, नारी आदि विभिन्न संघर्षों का चित्रण मिलता है।

3. समाज में धार्मिक संघर्ष के भी अधिक उदाहरण मिलते हैं। हिंदू-मुस्लिम तथा अन्य किसी भी धर्मियों के त्यौहार, उत्सव आदि के समय धार्मिक संघर्ष होता है और इसमें कई निरपराधियों की जानें चली जाती हैं। इसलिए सभी धर्मावलंबियों में सुधार की आवश्यकता दृष्टिगोचर होती हैं।

4. जिंदगी में मनुष्य को अनेक संकटों का सामना करना पड़ता है और जो संकटों पर मात करता है वह सफल होता है। इसलिए जिंदगी में संघर्ष एक महत्त्वपूर्ण आयाम है।

5. ठीक इन विभिन्न आयामों के समान शिक्षा, राजनीति, सांप्रदायिकता, अन्तर्जातीय संघर्ष, अधिकार से संबंधित संघर्ष, शोषण के खिलाफ संघर्ष तथा व्यक्तिगत संघर्ष-चेतना आदि का अपने-अपने स्थान पर विशेष महत्त्व है।

❑❑❑❑